IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भक्तिकालीन काव्य और भगवद्गीता का अंतर्संबंध

डॉ. रेखा कौशल

सहायक प्राध्यापक,हिन्दी विभाग

प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस

शास.नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय,आगर मालवा म.प्र.

हिंदी साहित्य का स्वर्ण युग कहा जाने वाला भक्ति काल अपने नाम से स्पष्ट अर्थ प्रदान करता है। भक्तिपरक रचनाओं की प्रधानता वाले इस काल में निर्गुण एवं सगुण धाराओं में प्रवाहित होने वाला काव्य गुणवत्ता और परिणाम दोनों दृष्टियों में अत्यंत समृद्ध है।आचार्य शुक्ल द्वारा भक्ति की अत्यंत सारंगर्भित परिभाषा है -भक्ति धर्म का रसायत्मक रूप है, क्योंकि यह बुद्धि, शरीर या क्रियाओं पर आधारित न होकर मनुष्य की भावनाओं पर आधारित है। ईश्वर विषयक रति के भाव की अभिव्यक्ति ही भक्ति है। स्पष्ट है कि भक्ति न केवल सर्वजनसुलभ है ,बल्कि सर्वाधिक मार्मिक भी है। यही कारण है कि लोग जीवन में जब धर्म ने आंदोलन का रूप लिया तो उसका माध्यम भक्ति ही बनी। भक्ति के मूल संकेत वैदिक साहित्य में अत्यंत सीमित रूप में दिखाई पड़ते हैं । शवेताश्वर उपनिषद में इसका आरंभिक परिचय मिलता है तो शांडिल्य सूत्र तथा नारद भक्ति सूत्र में इसका गंभीर विवेचन विद्यमान है। आगे चलकर बौद्ध और जैन धर्म में करुणा की प्रस्तावना है तथा भागवत धर्म के उदय के साथ व्यवस्थित रूप में भक्ति का विचार उपस्थित होता है । उत्तर भारत में श्रीमद्भागवत कथा दक्षिण भारत में *दिव्याप्रबंधन भक्ति के सैद्धांतिक आधार बने।

भक्त शब्द भज सेवायाम धातु में तिन प्रत्यय लगकर बनता है। जिसका अर्थ पूजा ,सेवा,उपासना आदि। इस प्रकार भक्ति सेवा द्वारा उपासना द्वारा ,ईश्वर से तादाम्य भाव स्थापित करना है । या इसे इस तरह से समझा जा सकता है, कि भक्ति उस भावना का नाम है, जिसमें भक्त ईश्वर के भाव में भावित होकर सर्वतोभवेन तदरूपता का अनुभव करता है। भक्तियोग की परिभाषा देते हुए नारद भक्तिसूत्र 16 में कहा गया है- "पूजा दिष्टनुराग इति पराशर्य:।"अर्थात भगवान की पूजा ,अर्चना व उपासना में अनुराग होना हो भक्ति है। इसी तरह नारद भक्तिसूत्र -18 में महर्षि शांडिल्य के अनुसार- आत्मप्रेम के अवरोध साधनों में अनुराग का होना ही भक्ति है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार सच्चे और निष्कपट भाव से ईश्वर की खोज करना भक्ति है।

हिन्दी साहित्य में भक्तिकाल को दो धाराओं में विभक्त किया पहली निर्गुण ज्ञानाश्रयी काव्य धारा या संत काव्यधारा दूसरी सगुण काव्यधारा। यहाँ उपरोक्त दोनों काव्यधाराओं का भगवद्गीता से सम्बन्ध, गीता से जुड़े भाव,मत,मान्यताएं,विचारधाराएँ,सिद्धांत,मूल्य आदि का चिंतन किया गया है | यथा प्रस्तुत -

निर्गुण काव्यधारा भक्ति काव्य की आरंभिक काव्य धारा है। इस धारा के प्रमुख कवि कबीर दास,रविदास,दादूदयाल ,मुल्कदास ,रजब ,सुंदरदास, गुरुनानक देव आदि हैं| यह सभी संत थे| संत अर्थात स्व के अंत कर ईश्वर की सत्ता और सर्वशक्तिमत्ता पर अटूट विश्वास रखने के कारण अत्यंत निर्भीक, साहसी और स्पष्टवादी व्यक्तित्व को धारण करने वाले । जिन्होंने संसार के समक्ष सदाचार, सत्य, ममता, शाश्वत धर्म एवं एकेश्वरवाद का आदर्श प्रस्तुत किया | निर्गुण भक्ति धारा में ईश्वर का निराकार स्वरूप, माया से मुक्ति, आत्मा-परमात्मा की एकता, और निष्काम भक्ति का महत्व प्रतिपादित किया | निर्गुण संतों ने गीता के ज्ञान और कर्म योग को अपनी भक्ति में आत्मसात किया, जिससे उनकी वाणी गीता के दार्शनिक संदेश के समान है।

निर्गुण भक्ति धारा और भगवद्गीता का अंतर्संबंध

निर्गुण भक्ति धारा के कवि कबीरदास, दादू दयाल, रैदास, मलूकदास आदि, ईश्वर को निराकार, निर्गुण और अद्वितीय मानते थे। उनका भक्ति मार्ग ज्ञानयोग और साधना पर आधारित था, जो कहीं न कहीं भगवद्गीता के निष्काम कर्म, आत्मज्ञान और परमात्मा की एकता के सिद्धांतों से संबधित है | जैसे –

1.गुरु की महत्ता को - कबीरदास ने गुरु को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान दिया है और उनकी वाणी में गुरु महिमा का सुंदर वर्णन मिलता है। यदि हम भगवद्गीता के संदर्भ में कबीर की गुरु महिमा को देखें, तो कुछ महत्वपूर्ण विचार उभरते हैं|

कबीर कहते हैं कि गुरु और भगवान (हरि) दोनों एक साथ खड़े हों, तो पहले गुरु के चरणों में प्रणाम करना चाहिए, क्योंकि गुरु ही हमें भगवान तक पहुंचाने का मार्ग दिखाते हैं।

कबीरदास जी-
"गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पाय।
बलिहारी गुरु आपने, गोविंद दियो बताय॥"

जायसी जी-
"बिन गुरु जगत को निर्गुण पावा"

गोस्वामी तुलसीदास जी का मंतव्य है---
" वंदहुं गुरु पद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि।"

श्रीमद्भगवद्गीता- (4.34)
"तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥"

इस श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं कि ज्ञान प्राप्त करने के लिए विनम्रता और सेवा के साथ गुरु के पास जाना चाहिए, क्योंकि वे ही सत्य का साक्षात्कार करवा सकते हैं। संत कबीरदास और अन्य संत भी कहते हैं कि गुरु ही हमें भगवान का सच्चा ज्ञान देते हैं।

आत्मज्ञान का स्रोत गुरु- कबीर मानते हैं कि बिना गुरु के आत्मज्ञान असंभव है। वे कहते हैं कि गुरु का ज्ञान ही हमें आत्मा और परमात्मा की पहचान कराता है।

"बिन सतगुरु सेवा किए, ज्ञान न उपजै मोहि।

गुरु पारस परसै नहीं, लोहा सुहागा होई॥"

श्रीमद्भगवद्गीता (2.52)

"यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।

तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च॥"

श्रीकृष्ण कहते हैं कि जब तुम्हारी बुद्धि मोह से पार हो जाएगी, तब तुम्हें आत्मज्ञान प्राप्त होगा। यह गुरु के मार्गदर्शन से ही संभव है, जैसा कि कबीर भी मानते थे।

गुरु के बिना सत्य की प्राप्ति असंभव-कबीर कहते हैं कि गुरु के बिना कोई भी व्यक्ति सत्य की खोज में सफल नहीं हो सकता।

"सतगुरु मिले तो सब मिले, ना तो मिला न कोय।

माता-पिता, बंधु सखा, यह तन का संबंध होय॥"

श्रीमद्भगवद्गीता (18.58)

"मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि।

अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि॥"

भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि यदि वह उनकी शरण में आएगा, तो सब संकटों से पार हो जाएगा। यह वही विचार है जो कबीर ने गुरु के संदर्भ में कहा—गुरु ही हमें परम सत्य तक ले जा सकते हैं।

2. निर्गुण भक्ति और भगवद्गीता में ब्रह्म का स्वरूप-निर्गुण संतों ने सगुण मूर्तिपूजा का विरोध किया और कहा कि ईश्वर निराकार, अजन्मा और अज्ञेय है। कबीरदास ने कहा:

"दास कबीर जतन करि हारा, निरभउ लिया न जाई।
निरगुण नाम बिना नर भटके, जैसे काग उड़ाई॥

भगवद्गीता में समान विचार-श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय (13.12-13)

"अद्भुतं खलु तद्विद्धि यज्ज्ञात्वाऽमृतमश्नुते।
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते॥"

श्रीकृष्ण भी अर्जुन को बताते हैं कि परमात्मा निराकार, अजन्मा और अज्ञेय है। यह विचार निर्गुण संतों की भक्ति परंपरा से मेल खाता है।

3. माया और संसार -निर्गुण संतों ने माया और संसार को असत्य माना। कबीरदास ने कहा:

"माया महा ठगिनी हम जानी।
तिरगुन फांसि लिये कर डोलै, बोले मधुरी बानी॥"
श्रीमद्भगवद्गीता (7.14)

"दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥"

श्रीकृष्ण कहते हैं कि यह माया मेरी ही शक्ति है, जो तीन गुणों (सत्व, रज, तम) से बनी है, और इसे पार पाना कठिन है। यह विचार निर्गुण संतों के मत से मेल खाता है।

4. आत्मा-परमात्मा की एकता-निर्गुण संतों ने कहा कि आत्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं है। कबीर कहते हैं:

"जल में कुंभ, कुंभ में जल है, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जलहि समाना, यह तथ कह्यो ज्ञानी॥"
श्रीमद्भगवद्गीता 2.20-

"न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥"

श्रीकृष्ण बताते हैं कि आत्मा अमर है और परमात्मा से अभिन्न है। यह निर्गुण संतों की आत्मा-परमात्मा की एकता के विचार से मिलता-जुलता है।

5. निष्काम कर्म और भक्ति का महत्व- निर्गुण संतों ने निष्काम भक्ति पर बल दिया और स्वार्थपूर्ण पूजा का विरोध किया। कबीरदास कहते हैं:

"सांची प्रीत हमारा राम सों, ज्यों जल में जल होय।"

भगवद्गीता में समान विचार:-श्रीमद्भगवद्गीता 9.22

"अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥"

श्रीकृष्ण भी कहते हैं कि जो भक्त अनन्य प्रेम से भगवान को भजते हैं, वे स्वयं उनकी रक्षा करते हैं।

सगुण भक्ति धारा और भगवद्गीता का अंतर्संबंध

सगुण भक्तिकालीन काव्य सगुण भक्ति धारा को श्रेष्ठ और ईश्वर प्राप्ति हेतु सरल माना जाता है । भगवान के सगुण रूप को आत्मसात कर भक्ति में राममय और कृष्णमय होना ही इस परंपरा का उद्देश्य रहा। रूप गुणशील और सौंदर्य की मूर्ति भगवान को अपने समीप देख पाने की लालसा भक्त की सहज इच्छा होती है , इच्छा की पूर्ति पहली बार इस काव्य के माध्यम से हुई ।भक्ति धारा में ईश्वर को एक साकार, प्रेमपूर्ण और

लीलाधारी रूप में पूजा जाता है। इस धारा के प्रमुख कवि तुलसीदास, सूरदास, मीरा, नरसी मेहता, चैतन्य महाप्रभु आदि रहे, जिन्होंने श्रीराम और श्रीकृष्ण की भक्ति को सर्वोपरि माना।

भगवद्गीता भी सगुण भक्ति का समर्थन करती है, विशेष रूप से जब श्रीकृष्ण स्वयं को परब्रह्म, योगेश्वर और भक्ति मार्ग के परम लक्ष्य के रूप में बताते हैं।

1. भगवान श्रीकृष्ण का सगुण रूप और सगुण भक्ति-सगुण भक्तों का विचार:-सगुण संतों ने ईश्वर को प्रेममय, दयालु और भक्तों के साथ लीलाएं करने वाला बताया। सूरदास ने कृष्ण की बाल लीलाओं का वर्णन किया, जबकि तुलसीदास ने श्रीराम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में पूजा।

भगवद्गीता में समान विचार:
(श्रीमद्भगवद्गीता 10.8)
"अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः॥"

श्रीकृष्ण कहते हैं कि "मैं ही समस्त सृष्टि का मूल कारण हूं। ज्ञानीजन इस सत्य को जानकर प्रेमपूर्वक मेरी भक्ति करते हैं।"यह सगुण भक्ति संतों की धारणा के समान है, जहाँ वे श्रीकृष्ण और श्रीराम को सृष्टि का आधार मानकर उनकी आराधना करते हैं।

2. प्रेम और अनन्य भक्ति का महत्व-सगुण संतों ने प्रेम को भक्ति का आधार माना। मीरा कहती हैं:- "मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई।"

भगवद्गीता में समान विचार:(श्रीमद्भगवद्गीता 9.22)
"अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥"
श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो अनन्य प्रेम से मेरी भक्ति करते हैं, मैं स्वयं उनकी रक्षा करता हूँ।यह मीरा, सूरदास और अन्य भक्तों की भक्ति भावना से पूर्णतः समान है|

3. भक्ति मार्ग की महत्ता-सगुण भक्तों का विचार:-सगुण भक्ति मार्ग में साधक केवल भगवान के नाम, गुणगान और आराधना द्वारा मुक्ति पाता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी :-"कलियुग केवल नाम अधारा, सुमिर सुमिर नर उतरहि पारा॥"

भगवद्गीता में समान विचार:(श्रीमद्भगवद्गीता 18.65-66)
"मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥" श्रीकृष्ण कहते हैं, "मुझमें मन लगाओ, मेरी भक्ति करो, मेरा स्मरण करो, इससे तुम मुझे ही प्राप्त करोगे।"
यह सगुण भक्ति मार्ग की मूल अवधारणा को ही पुष्ट करता है।

4. निष्काम प्रेम और लीला भाव-सगुण भक्तों ने भगवान की लीलाओं को प्रेम और भक्ति का सर्वोच्च रूप माना। सूरदास ने कहा:"मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।"

भगवद्गीता में समान विचार:(श्रीमद्भगवद्गीता 4.9)

"जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।

त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥" श्रीकृष्ण कहते हैं कि "जो मेरी दिव्य लीलाओं को तत्त्व से जानता है, वह पुनः जन्म नहीं लेता और मुझे प्राप्त करता है।"

निर्गुण और सगुण काव्य धारा के एक समान भाव और भगवद्गीता

.भक्ति नाम, कीर्तन का महत्व:-भक्ति काल की यह विशेषता रही है कि सभी कवियों ने अपने अपने आराध्य देव का स्मरण किया है। इस काल में भजन कीर्तन का महत्व सबसे ज्यादा रहा है ।

जायसी जी का मानना है कि-
"सुमिरौ आदि नाम करतारू "

गोस्वामी तुलसीदास का कहना है----
"मोरे मत बढ़ नाम दुहू ते|जेही किए जग निज बल बूते।।"
भगवद्गीता के अनुसार भक्ति ईश्वर तक पहुँचने का सर्वोत्तम साधन है। गीता में कृष्ण ने अर्जुन से कहा—"मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।" (अध्याय 9, श्लोक 34) (अर्थ: मेरे बारे में सोचो, मेरे भक्त बनो, मेरी पूजा करो और मुझे नमस्कार करो।)

निष्काम कर्मयोग: गीता का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है—"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।" अर्थात् व्यक्ति को कर्म करते रहना चाहिए, लेकिन फल की चिंता नहीं करनी चाहिए। यह विचार भक्तिकालीन कवियों के काव्य में स्पष्ट रूप से दिखता है, विशेष रूप से कबीर और रहीम की साखियों में।

दास्य भाव और पूर्ण समर्पण: गीता में अर्जुन को श्रीकृष्ण द्वारा बताया गया कि भगवान के प्रति पूर्ण समर्पण करने से मुक्ति संभव है—"मामेकं शरणं व्रज।" भक्तिकाल के कवियों ने भी यही भाव अपनाया। तुलसीदास के "रामचरितमानस" और सूरदास के "सूरसागर" में श्रीराम और श्रीकृष्ण के प्रति दास्य भाव (सेवाभाव) स्पष्ट रूप से मिलता है

निष्कर्ष- भारतीय धर्म,दर्शन,योग,संस्कृति,सभ्यता आचार और विचार भक्ति साहित्य के सुंदर कलेवर में सुरक्षित है शगुन निर्गुण भक्ति योग दर्शनिकता आध्यात्मिकता और आदर्श जीवन के भविष्य चित्र संयहित है कुछ मिलाकर भक्ति साहित्य तत्कालीन जनता का उन्नयन प्रेरक एवं उद्धार करता है वह भारतीय संस्कृति का शिक्षक के उपदेष्टा है रामकृष्ण अलख निरंजन और ओंकार का स्मारक है जो आज भी हिंदू जनजीवन के प्रातः स्मरणीय है।

भक्तिकाल में भाव और भाषा काव्य और संगीत का सुंदर योग है| काव्य में संगीतात्मकता के समावेश के लिए जिस आत्मविश्वास, तीव्र अनुभूति ,सहजस्फूर्ति और अंतः प्रेरणा की आवश्यकता होती है, वह भक्ति काव्य में पर्याप्त मात्रा में हैं। सूर, तुलसी ,मीरा कबीर के नानक के पद सबके हृदय और कांठों में आज तक बसे हैं।ब्रज अवधि और टकसाली भाषा की मिठास की गूंज से जनमानस सरोबार हो जाता है। रस,अलंकार , छंद स्वाभाविक प्रयोग उनके योगमय काव्य को और भी सुंदर ,कोमल और प्रभावशाली रूप में जीवन में उतर चुका है।

निर्गुण और सगुण भक्ति धारा और भगवद्गीता से घनिष्ठ संबंध है। जहाँ भक्तियोग,कर्मयोग और ज्ञानयोग चिंतन करते हुए भक्तियोग के माध्यम से ईश्वर को प्राप्त करने का मार्ग बताया | भगवद्गीता के उपदेशों को सरल और सार्थक रूप में अपने काव्य में प्रस्तुत किया | संतों ने ज्ञान से अधिक प्रेम और भक्ति महत्वपूर्ण माना और समझाया भगवान तर्क से नहीं वरन प्रेम और समर्पण से प्राप्त होते हैं| भक्तिकालीन काव्य और भगवद्गीता जनकल्याण मानक उदात्तता ,भावनाओं की अनुभूतियों की उच्चता, और जीवन मूल्यों की श्रेष्ठता लिए हुए है।। महात्माओं की दिव्यवाणी उनके अंतः कारणों से निकलकर देश के कोने कोने में फैली भक्तिमय योग की सुषमा जनजीवन को दुख,निराशा,रोग,भय,वेदना,असुरक्षा,कष्ट और नकारात्मकता से मुक्ति प्रदान कर सुखी और आनंदमय जीवन की ओर अग्रसर करती है जो श्रीमाद्भग्वाद्गीता के मूल उद्देश्य को पूर्ण करने में सार्थक सिद्ध होती है |